— पंचम अध्याय —

उपसंहार

उपसंहार

हरिशंकर परसाई जी एक गहरी सामाजिक जिम्मेदारी माननेवाले साहित्यकार हैं। और उनका साहित्य सुधार और लोक मंगल की भावना से ओत-प्रोत है। इसीकारण उनका लेखन समाज प्रतिबध्द साहित्य के अन्तर्गत आता है। व्यंग्यकार सृजन के वक्त आदर्शवादी बन बैठता हैं और शोषनहीन समाजव्यवस्था की कल्पना करता हैं और उसे साक्षात लाने के लिए अपने अपने व्यंग्य का अस्त्र लेकर समाज के हर एक विसंगतियों पर प्रहार करता हैं। यही बात परसाई जी के लेखन में मुख्य रूप से दिखाई देती है। लोगों में तथा पाठकों में मानसिक परिवर्तन के द्वारा सामाजिक परिवर्तन की पृष्टभूमि तैयार करना परसाई जी के व्यंग्य लेखन का मुख्य उद्देश्य हैं। उनका ध्येय पाठकों में तथ्यों के वैचारिक विश्लेषण की सहायता से सामाजिक मुल्यों, राष्ट्रीय तथा आंतराष्ट्रीय विषय तथा समस्याओं पर नये सिरे से बहस के लिए तैयारी करना हैं। परसाई जी अपने व्यंग्य रचनाओं के माध्यम से बहुत कुछ सामाजिक, राष्ट्रीय तथा आंतर्राष्ट्रीय विषयों की बहस में शामिल होते दिखायी देते हैं।

परसाई जी का साहित्य युगानुरूप हैं, कालजयी हैं। क्योंकि जमाना बदलता है पर विसंगतियाँ वही-के-वही रह जाती हैं, व्यक्ति मर जाते हैं पर उनके स्वभाव, प्रवृत्तियाँ नही मरती। प्रेमचंद के समय की स्थिति आज भी समाज में विद्यमान है, इसीकारण उनके उपन्यास बडी रोचकता से आज भी पढे जा रहे हैं। इसीकारण ही परसाई जी का साहित्य भी युगानुरूप हैं, कालजयी हैं।

परसाई जी के लेखन में भाव तन्मयता तो आवश्यक हैं परंतु परसाई जी ने व्यंग्य कभी हँसी-मजाक पैदा करने के लिए नही लिखा। उनके व्यंग्य का आधार हैं प्रहार और वह प्रहार भी उद्देश्यपूर्ण होता हैं। परसाई जी के व्यंग्य की सार्थकता उनके भाषाशैली में है। उन्होने बहुत ही सीधी-सादी बोलचाल की भाषा का प्रयोग अपने व्यंग्य रचनाओं के लिए किया हैं। कहीं

कहीं उनका व्यंग्य इतना तीखा हो गया हैं कि आलम्बन को तिलमिला देता हैं। व्यंग्य के लिए प्रयुक्त हर एक शब्द, वाक्य आक्रमण की ताकद रखता हैं और उनके मन का आक्रोश जन चेतना को क्रांति के लिए प्रेरित करता हैं। परसाई जी में व्यंग्य एक जन्मजात संस्कार के रूप में विद्यमान हैं, ऐसा उनके कृतियों का अध्ययन करने से ज्ञात होता हैं, जिसके कारण परसाई जी ने हिन्दी साहित्य में श्रेष्ठ व्यंग्य की परम्परा स्थापित की हैं।

परसाई जी की मानवीय संवेदन शक्ति अद्वितिय हैं। यही इन्सानी सलग्नता उनके लेखन को सार्थक बना देती हैं क्योंकि समाज व्यवस्था में निरन्तर परिवर्तन आता हैं, जिसके कारण मनुष्य को अपने संस्कारों में परिवर्तन लाना जरूरी होता हैं। मनुष्य के इसी भीतर परिवर्तन को परसाई जी ने पकड़ा हैं और उसे अपने व्यंग्य रचनाओं में उजागर किया हैं।

कुछ विद्वानों का कहना हैं कि परसाई के व्यंग्य साहित्य की कोई सामाजिक उपयोगिता नहीं हो। अपराधियों को सजा देने के लिए कानून हैं, चरित्र की उन्नती करने आध्यात्मिक साहित्य हैं, तो ऐसे समय परसाई व्यंग्य लिखना क्यों नहीं बन्द कर देते ? लेकिन ये लोग भूल जाते हैं कि अपराधी समाज इतना धूर्त हैं कि कानुन उसका कुछ बिगाड नहीं सकता क्योंकि उनकी पहुँच बहुत उपर तक होती हैं, यही बात परसाई जी ने "रामकथा-क्षेपक" इस व्यंग्य लेख में बताई हैं। अत: ऐसे लोगों को समाज की नजरों से गिराना ताकि वे फिर से कोई बुरा काम न करे इसीलिए उनके काले करतुतों का पर्दाफाश करना व्यंग्यकार का काम होता हैं। यही बात परसाई जी ने अपने व्यंग्य लेखन से की हैं।

परसाई जी ने सत्य को बिना झिझक तथा बिना संकोच से कहने की परम्परा स्थापित की हैं। लेखक ने अपने जीवन काल में अनेक सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा व्यक्तिगत बिमारियों को दु:ख पहुँचाया हैं। अभिव्यक्ति के सारे खतरे उन्होंने उठाये हैं। यही बात उन्होंने अपने व्यंग्य लेख "डेंगु", अध्यात्म और लेखक" में बताई हैं। फिर भी लेखक किसी शासन व्यवस्था से भयाक्रान्त नहीं हैं, उन्हे जो भी कहना हैं, उसे

अपने ढंग से सच सच कहते हैं। उन्हे जहाँ भी शोषण, मक्कारी, विसंगति तथा अंतर्विरोध दिखाई देती हैं वहाँ वे अपने व्यंग्य का अस्त्र लेकर हाजिर हो जाते हैं। "माटी कहे कुम्हार से" के अन्तर्गत प्रत्येक सप्ताह के ज्वलन्त समस्यापर परसाई व्यंग्य के सहारे प्रकाश डालते आ रहे हैं। वर्तमान जीवन में मानव के लिए पीडादायक तथा कष्ट दायक विसंगतियाँ हैं, उनके प्रति परसाई जी के मन में घृणा का भाव विद्यमान हैं। इसीलिए तो उनका मूल स्वर परिवर्तन के लिए विशेष अनुकूल दिखाई देता हैं।

परसाई जी ने अधिक मात्रा में राजनीतिक घटनाओं एवं राजनीति की विडम्बनाओं पर व्यंग्य लेखन किया हैं। इसके बाद सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक सांस्कृतिक एवं साहित्यिक असंगतियों पर, राजनीति और अर्थनीति के खोखले पन को व्यक्त किया। परसाई जी ने राजनीतिक क्षेत्र के किसी एक राजनीतिक दल के व्यक्ति से लेकर मंत्रियों की भ्रष्ट प्रवृत्तियों पर, सरकार की नीतियों तथा सरकारी कर्मचारियों की अव्यवस्था एवं अकर्मण्यता पर, सामाजिक क्षेत्र के व्यक्ति के स्वार्थी प्रवृत्ति से लेकर समाज-हित के नाम पर चन्दा एकत्र कर उसे व्यक्तिगत हित में व्यय करनेवाले समाज सुधारकों पर, कुत्सित एवं भ्रष्ट आचरणों पर, समाज को यथास्थिति में रखकर शोषण परम्परा कायम रखनेवाले राजसत्ता, धर्मसत्ता और अर्थसत्ता पर, धर्म के नाम पर फैले जातिवाद, रूढ़ियों और अन्ध-विश्वासों पर, आर्थिक क्षेत्र में देश और व्यक्ति की दीन-हीन दशा से लेकर भारत में बढ़ती हुई बेरोजगारी, व्यापारी वर्ग की मुनाफाखोरी, काला-बाजारी, तस्करी तथा सरकार की आर्थिक नीतियों पर खूब व्यंग्यात्मक प्रहार किये हैं। इसी के साथ परसाई जी ने साहित्यिक क्षेत्र में कवि, लेखकों और समीक्षकों की क्षुद्र प्रवृत्तियों एवं मनोवृत्ति आदि पर साहित्यिक व्यंग्य लिखा हुआ दिखाई देता हैं। सांस्कृतिक जीवन में देश और देशवासियों के नैतिक पतन को, पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंगकर भारतीयता का परित्याग करनेवाले नवयुवक, देशवासियों के खान-पान, रहन-सहन आदि विविध विषयों से सम्बन्धित विसंगतियों को परसाई जी ने अपने व्यंग्य का निशाना बनया हैं।

परसाई का व्यक्तित्व पूरी तरह से भारतीय जनता के लिए समर्पित एक जिम्मेदार नागरिक, कलम के सिपाही हैं जो देश और जनता के खातिर किसी को भी माफ नही करते, यहाँ तक की अपने आप को भी उघाडते हैं। परसाई व्यंग्य साहित्य को समाज को बदलने का एक प्रभावी अस्त्र मानते हैं तथा समाज को स्वस्थ बनाने की संजिवनी बुटी। और एक साहित्यकार होने के नाते इन्सानियत और रचनाशीलता को जीवित रखने की ईमानदार कोशिश परसाई जी ने व्यंग्य लेखन से की हैं।

हरिशंकर परसाई जी आधुनिक युग के कबीर हैं। उन्होने अपने युग की अनेक समस्याओं, यातनाओं, पीडा, कुंठा, भ्रष्टाचार, ढोंग, अवसरवादिता, अन्धविश्वास, साम्प्रदायिकता, कट्टर जातिवाद, राष्ट्रविरोधी कृत्यों, भाषावाद, मानसिक गुलामी, गरीबी, राजनीतिक भ्रष्टाचार, स्वार्थी वृत्ति, दुमुँहापन, गहरी किस्म की चालाकी और धूर्तता को देखा हैं और उसके खिलाफ आँख मिलाने की प्रेरणा और शक्ति प्रदान करते हैं। उन्होने समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा लालफीताशाही एवं अफसरशाही का भण्डा चौराहे पर फोडा हैं। देश की नोकरशाही के संपूर्ण चरित्र को अपने व्यंग्य के सहारे व्यक्त किया हैं। इस प्रयास में परसाई जी ने नोकरशाही के स्वेच्छाचारी वातावरण को बेपर्दा किया हैं। परसाई जी की हर एक व्यंग्य रचना सोद्देश्य हैं। और उनमें हर एक निबंध आज की जटिल गतिविधी एवं समस्याओं को समझने के लिए एक अन्तर्दृष्टि प्रदान करता हैं।

वर्तमान भ्रष्टाचार एवं अनैतिकता पर "पगडंडियों का जमाना" नामक व्यंग्य निबंध पर प्रकाश डाला हैं। स्कूल में लडकों को भरती करवाना हो तो डोनेशन, नोकरी पाने रिश्वत, वो भी औरत के जिस्म की, गाँव के ग्रामविकास अधिकारी से लेकर जीले तक के उच्च अधिकारी तल सभी भ्रष्ट आचरण से संपत्ति इकठ्ठा कर रहे हैं। छात्र अध्ययन करके उत्तीर्ण नही हो रहे हैं बल्कि चर्चा आउट करके, नम्बर बढवाकर पास हो रहे हैं। व्यापारी वर्ग ने मुनाफे में वृध्दि के लिए "मिलावटी सभ्यता" को अपना लिया हैं। जिसे देखो वही राक्षसी

हरकतों से मानवता का गला घोट रहा हैं। हमारे बच्चों ने सफलता का रहस्य जान लिया है, जो चीज सडक पर हो उसे घर उठा ले आओ, वह इस जमाने मे सफल हो जायेगा। कोई सीधे राह से जाकर सफलता प्राप्त नही कर सकता, पगडंडि पकडे तो जल्द सफल हो जाता हैं। लगता हैं परसाई जी ने अपने युग को सही मायने मैं पहचान लिया हैं और अपने युग में पलनेवाले अंतर्विरोध, पाखण्ड, झूठ, फरेब आदि को नग्न यथार्थ के साथ अभिव्यक्ति दी हैं।

"अपनी अपनी बीमारी" में परसाई जी ने सामाजिक व्यवस्था और आर्थिक विषमता को उजागर किया हैं। बुध्दिजीवी लोग अपनी ईमानदारी एवं नैतिकता के कारण तकलीफ उठा रहे हैं और बेईमानी गांधी के नाम का धंधा करके ऐश-ओ-आराम की जीन्दगी जी रहे हैं। सरे आम अनैतिक आचरण करते हैं और कानून उनकी ही हिफाजत करता हैं। आम आदमी चन्द रोटी के टुकडो के लिए मोहताज बना हैं और यहाँ व्यापारियोंने "मिलावटी सभ्यता" को अपना लिया हैं। देश में भुखमरी से न जाने कितनी ही लोगों की जाने चली जाती हैं पर यहाँ के व्यापारी सट्टेबाजी, स्मगलिंग करके मुनाफे में वृध्दि कर रहा हैं, इसी कारण देश में आर्थिक विषमता बढती ही जाएगी।

आजाद भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू से लोगों ने यह उम्मीद लगायी थी कि अब उनकी दयनीय हालत सुधरेगी पर कोई सुधार नही हुआ। नेहरू तथा लाल बहाद्दुर शास्त्री जी के बाद देश में भ्रष्ट नेतृत्व ने जन्म लिया परिणामत: परसाई जी के लेखन में यथास्थितिवादी राजनीतिक लेखन का विशेष प्रभाव दिखाई देता हैं।

परसाई स्वतंत्रता को वर्गीय दृष्टि से देखते हैं। वे जान गये थे कि आजादी का अधिकांश लाभ तो संपत्तिशाली, धनी तथा नेता लोग ही उठा रहे हैं और मेहनतकश जनता का और भी अधिक शोषण हो रहा हैं इसलिए उनके लेखन में राजनीतिका प्रभाव अधिक दिखाई देता हैं। आजादी मिलने के बाद गांधी जी के सपने तो बिलकुल हवा में उड गये। ऐसी स्थिति में अपने को गांधीवादी मानने का ढोंग रचानेवाले ढोंगियों पर परसाई जी ने व्यंग्य किया हैं। साथ ही

परसाई जी ने यह भी समझ लिया था कि आजादी जनता को नही बल्कि शोषकों को मिली हैं।

देश में अब शुध्द और तत्वनिष्ठ राजनीति का अभाव हैं, ऐसा ही परसाई जी का मत दिखाई देता हैं। क्योंकि हर एक राजनीतिक पार्टी आश्वासन के दगाबाज शब्दों से आम आदमी को अपने झंडे के तले गुमराह कर रही हैं हैं, राजनीतिक पार्टीयाँ काले धन की शरण पर जिन्दा हैं। देश के प्रशासक, राजनीतिक नेता, अधिकारी, पुलिस विभाग सब की जेब में काला धन पहूँचता है तो ऐसे समय राष्ट्र से विकास की आशा रखना व्यर्थ हैं। आजादी के इतने दिन गुजर जाने के बाद भी देश का आम आदमी सुखी नही हैं, इसका प्रमुख कारण उसे सुखी बनाने का सही प्रयास इस देश के नेताओं ने नही किया। उसे अच्छे अच्छे नारे व सपने जरूर बाँटे गये लेकिन उनपर अमल नही किया गया। "समाजवाद" और "गरीबी हटाओं" का नारा लगाया किन्तु "गरीबी हटाओं" का नारा लगानेवाले इस देश के नेता "समाजवाद" को आने नही देते क्योंकि "समाजवाद" का नारा बुलन्द करनेवाले चाहते हैं कि वर्गभेद बना रहे ताकि गरीबों का शोषण करके वे अपने पास धन इकठ्ठा करते रहे। इस तरह परसाई जी ने समाजवाद के सपने बाँटनेवाले राजनीतिक दलों की वैचारिक संकुचितता व्यक्त की हैं। वर्ग-संघर्ष के सिध्दान्त पर अपनी वैचारिक प्रक्रिया से ही समाजवाद स्थापित होता हैं कागजी घोडे नचाने से नही, ऐसी परसाई जी की धारना हैं। जैसे "समाजवाद" का नारा लगाया हैं वैसे ही "शराब बंदी" का नारा लगाया जाता हैं, लेकिन शराब बंदी नही होती। इसका कारण अपने देश के नेता, अफसर और ठेकेदार मिलकर हाथभट्टी का गैर कानुनी धंधा चलाते हैं और दिखावे के लिए "नशा बंदी" का नारा लगाते हैं।

कई आलोचकों का कहना हैं कि व्यंग्य लिखने का सर्वोत्तम तरीका है -- सत्य कहना। हिन्दी साहित्य के इतिहास में इस तरीके से लिखने का सर्वोत्तम प्रयास परसाई जी ने किया हैं। इस प्रयासों में परसाई जी ने पाठकों को यह अनुभव करा दिया हैं कि राजनीति के संपर्क से लेखन किस तरह श्रेष्ठ बनता

है और जनता को प्रिय भी। उनकी जादह से जादह रचनाएं राजनीति से संबंधित हैं क्योंकि समस्त विसंगतियों का मूल उत्स राजनीति है। आज हर एक क्षेत्र पर नेतागीरी हावी होती जा रही हैं, जिसके कारण जीवन के हर एक क्षेत्र पर कुप्रभाव पडा है।

नारी स्वतंत्रता की लाइाई राजनैतिक स्तर पर तो लडी जाती है, पर देश में स्त्रीयों पर "बलात्कार" होने की खबरे अखबारों में छापी जाती हैं, उनका "ब्ल्यु फिल्म" के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है और यह काम भी देश के नेता द्वारा किया जा रहा हैं। औरत तो नेताओं के लिए "वेश्या" हैं, जिसका जब चाहा भोग किया जा रहा है। राजनीति बडी गन्दी चीज है। जनतंत्र में जनभावना का आदर होना चाहिए पर बाबा सनकीदास जैसे लोग अपने स्वार्थो के लिए मामुली-सी बात को सामाजिक, राजनीतिक "ईशु" का आकार दे देते हैं। तब मजबुरन मानना पडता हैं कि स्वतंत्रता के बाद जनतंत्र की लगातार हत्या ही हो गई हैं। इस तरह परसाई जी ने समाज-सेवा, धर्म, क्रांति तथा सुधार का नकाब धारण किये हुए लोगों के नकाबें अपने व्यंग्य के माध्यम से उतार लिये हैं।

एक जमाना था, जब नारी घर की दहलीज को पार नही करती थी। वही स्त्री मँहगाई के मार से घर से बाहर रास्ते पर आ गई। इसी अवसर का लाभ देश के नेता, अफसर, तथा धनी लोगों ने उठाया। नारी के असहाय स्थिति का लाभ उठाकर उसका भोग किया जा रहा है। पुरुष की बराबरी से उसका सडकों पर उतरना मुक्ति की भावना का प्रतीक नही बल्कि एक की कमाई से पूरा नही पडता। औरत तो एक रोटी की खातिर अपना जिस्म तक बेच देती हैं ताकि उसका भूखा बच्चा कुछ खाये। अर्थशास्त्र ने उसके संस्कारों को तोड डाला।

आज की हमारी शिक्षा व्यवस्था बैध्दिक दृष्टि से बर्बर बन गयी हैं ऐसा ही परसाई का मत दिखाई देता है। क्योंकि आज की शिक्षा पर राजनीति हावी हैं। वहाँ छात्रों में नये निर्मान, नयी शक्ति, एवं चेतना प्रदान करने का अभाव हैं। हमारे विश्वविद्यालय सर्टीफिकेट बेचने की दुकाने बन गयी

हैं। छात्र समुदाय इम्तहान पास करने अनैतिक एवं भ्रष्ट साधनों का सहारा ले रहा हैं। प्राध्यापक वर्ग तथा व्यवस्था छात्रों के अनैतिक आचरण को रोकने असमर्थ हैं। परिणाम स्वरूप छात्र समुदाय अपने आपको खोखला एवं परतंत्र बनाता जा रहा हैं। आज शिक्षा संस्थान सार्वजनीक न रहकर व्यक्तिगत मालमत्ता बन गये हैं। जिसके सहारे सरकार ने जाने अनजाने पूँजीपति व्यवस्था को बढावा दिया है, ऐसा कहा तो अनुचित नहीं होगा। अधिकांश नेताओं के शिक्षा संस्थान हैं जहाँ व्यावसायिकता प्रदान हेतु हैं। अधिकांश शिक्षा संस्थान राजनीति के अड्डे बन गये हैं, नेताओं ने कुछ छात्रों को भी अपना बना लिया हैं जिनके जरिये सभी काले धंधे व्यवस्थित रूप से किये जाते हैं। शिक्षा के पतन को सिर्फ नेताओं को दोषि ठहरना उचित नहीं हैं, इसके लिए अधापक भी कुछ हद तक गुनहगार हैं। अधापक द्रोणाचार्य के मार्ग पर चल रहे हैं। अपनी नौकरी बचाने राजनीति का आश्रय ले रहे हैं। अधापक अपने स्वार्थों के लिए गरीब एकलव्यों के अंगुटे कटवा रहे हैं। आखिर एकलव्य के पास गुरू दक्षिणा मे देने को हैं ही क्या ? सिर्फ गुरुभक्ति, बस !! भक्ति को लेकर अधापक क्या करे ? उससे तो पेट नहीं भरता। आज के इस स्वार्थी माहोल में पैसा ही सब कुछ हैं इसलिए अधापक अर्जुन के लिए सदैव एकलव्य का अंगुटा दान माँगता रहेगा। अर्जुन और एकलव्य की दूरी को कम करने की ताकद आज की शिक्षा में नहीं हैं। क्योंकि दोनो परिवारों की आर्थिक स्थिति भिन्न हैं। यही बात परसाई ने "सुदामा के चावल" इस व्यंग लेख मे बताई हैं। कृष्ण और सुदामा एक ही गुरू के दो शिष्य हैं पर कृष्ण राजा बने और सुदामा भिखारी हो गये। इसी शिक्षा ने सुदामा को कृष्ण क्यो नहीं बनाया ? क्योंकि दोनो परिवार की आर्थिक स्थिति भिन्न हैं। जबतक हम शिक्षा के क्षेत्र में समानता नहीं लाते तबतक कृष्ण राजा रहेंगे और सुदामा कृष्ण के सामने हाथ पसारे याचना करते रहेंगे और एकलव्यों के अंगुटे काटे जायेंगे।

सरकारी कर्मचारी तथा पुलिस विभाग भ्रष्टाचारी क्यो बना ? इसका प्रमुख कारण यह हैं कि उन्हे आर्थिक सुरक्षा देनी चाहिए, जबतक उनकी

आर्थिक स्थिति में सुधार नही होता तबतक उसे मजबूरन घूस लेना पडेगा। कम तनख्वाहवाला आदमी अपनी बीवी को खुश नही रख सकता तब उसे मजबूरन घूस लेना पडता है। उसपर निगरानी आयोग, जाँच कमिशन, उपदेश, भाषणों से वह नही सुधरेगा। यही बात परसाई जी ने अपने व्यंग्य लेखों से बताई है।

सिफारिशी चिट्ठी यदि नौकरी पानेवाले उम्मीदवार के हाथ में न हो तो किसी भी दफ्तर के भीतर घूसने की इजाजत नही है। आवेदन पत्रों पर पैसों का वेट जितना अधिक होगा उतना ही खतरा कम है। जो उम्मीदवार आवेदन पत्रों पर पैसों का वेट नही रखते समझलिजीए उसके नौकरी का चांस गया।

जो हालत शिक्षा की हुई वही स्थिति साहित्य क्षेत्र की रही। राजनीति की विषाक्त वायु ने साहित्य को भी नही छोडा। स्वातंत्र्य प्राप्ति के लिए जीस साहित्य ने जनमानस में क्रांति की आग सुलगा दी थी उसी क्षेत्र में अब कुछ दूषित मनोवृत्ति ने जन्म लिया है। साहित्य की चोरी करनेवाले, नकल करनेवाले और उसे अपने नाम प्रकाशित करनेवाले कई गिरोह यहाँ मौजुद है। जिस तरह नौकरी पाने नेता की का आशिर्वाद चाहिए तथा चापलुसी करनी पडती है उसी तरह साहित्य कृति को प्रकाशित करने तथा उसे पाठ्यक्रम में लगाने शिक्षा विभाग के किसी अधिकारी को प्रसन्न रखना पडता है याने यहाँ भी इष्टदेव मौजूद है। नेता के समान समीक्षकों को भी चापलुसी, स्तुति भाने लगी है। चापलुसी, स्तुति तथा उनका कोई काम न करे तो मान लिजिए कृति की आलोचना कट् हो गयी। किसी लेखक की साहित्य कृति अच्छि होने से उसे समाज में इज्जत, सम्मान, प्रतिष्ठा तो मिलती है लेकिन इन सब बातों से उसका पेठ तो नही भरता। पैसों की लालच में आकर आज बडे-से-बडा अग्निधर्मा लेखक भी कौडियों के दाम बिक रहे है। जीवन की दरिद्रता और अभाव से तंग आ कर आज अनेक साहित्यकार बेबस है, जिन्हे आर्थिक सहायता देकर जनभावनाओं को अभिव्यक्ति देने का काम करवाना चाहिए, नही तो बिका हुआ व्यक्तित्व अपनी भावनाओं, चेतना के प्रति इमानदार नही रह

सकता। साहित्यकार की इस असहाय स्थिति का लाभ नेता, धनवान उठा रहे हैं, उसकी प्रतिभा का अपने हित में उपयोग कर रहे हैं। साहित्यकारों की यह अभाग्रस्तता और दरिद्रता की स्थिति साहित्य के पतन का मुख्य कारण है।

परसाई के नजर से समाज में पलनेवाली हर कोई विसंगति बच नहीं पायी। धर्म एक व्यापार है; जो जितना व्यापार बढाता है, वह उतना ही ऐश-ओ-आराम की जीन्दगी गुजार लेता है। इसी धर्म और अध्यात्म के नाम पर भारत में मिट्ठी भी सोने के दाम बिकती हैं। धर्म के नाम पर ढोंगी साधु-संतों ने अपने देश की सामान्य जनता को हमेशा लुटा हैं और वर्तमान में भी लुट रहे हैं। धर्म के नाम पर नारी की इज्जत लूटी जाती है, दीन-हीन गरीब महिलाओं को देवदासी बनाकर उनका भोग किया जा रहा हैं। अज्ञान और अंधविश्वास फैलाने का काम भी इसी धर्म ने किया। धर्मसत्ता और राजसत्ता ने जनमानस में ऐसी झूठी श्रध्दाएं और विश्वास जमा दिये हैं कि गुलाम आजाद होने तैयार ही नहीं हैं। राजसत्ता, अर्थसत्ता और धर्मसत्ता ने मिलकर बहुजन समाज को यथास्थिति में रखा और शोषण की परम्परा को बनाये रखा हैं। अपितु यह काम वे भगवान या खुदा के नाम से करते हैं। भगवान को साक्षी मानकर जितना झूठ बोला जा रहा हैं उतना उनके पीठ पीछे भी नहीं बोला जाता। हाँ, अच्छे ढंग से बोला गया झूठ भी सच बनता हैं, बस! सहारे पवित्र होने चाहिए, जैसे "गरीबी हटाओ", "समाजवाद", "भगवान" आदि। ये तथाकथित महात्मा समुची दुनियाँ को धर्म के अंधे कुएँ में ढकेल रहे हैं और खुद धन, नारी और मदिरा के मस्ती में झूम रहे हैं। "वैष्णवजन" तो "तेने कहिए जे पीर पराई जाने रे" की आड में होटलों में ग्राहकों के लिए शराब, कैब्रे, मांस तथा रात की गर्मराहट बनाये रखने को होटलों में सटे कमरों में औरत का बाकायदा इंतजाम किया जाता हैं। पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति ने हमारे सांस्कृतिक माहोल को गंदा बना दिया। चरित्र जो हमारी पवित्रता हैं वह भी पतीत होता चला गया। देश की युवतीयाँ

शादी से पहले ही गर्भपात करती हैं। युवावर्ग रात के अंधेरे में चुपचाप बी॰पी॰ व्हिडीओ कॅसेट देखकर वही अनुकरण करने लगे हैं। नये और पुराने पीढी में संघर्ष हमारे सांस्कृतिक जीवन की विडम्बना हैं। आदर्श जीवन के नीति मुल्यों का ऱ्हास हो रहा हैं। इस तरह के नैतिक पतन के लिए सिर्फ युवा वर्ग को दोषी ठहराना उचित नही हैं, इसके लिए हम अपने पहलेवाली पीढी को भी दोष दे सकते हैं, क्योंकि उनका काम था कि वे स्वयं अच्छे संस्कार ग्रहण करे और भावी पीढी पर भी अच्छे संस्कार करे। लेकिन यह कतई संभव नही हैं क्योंकि पिता अपने बेटे के सामने शराब पीता हैं, अनैतिक आचरण करते हैं, तो ऐसे समय क्या अपने संस्कृति की महानता चिरकाल टिक पायेंगी ?

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि परसाई जी के व्यंग्य का अस्त्र जहाँ न पहुँचा हो ऐसी कोई भी विसंगति बाकि नही हैं। बडी व्यापक तथा पैनी दृष्टि से इन्होने जीवन जगत् में पलनेवाली हर एक विसंगति को देखा, परखा, अनुभव किया और उसे अभिव्यक्ति दी हैं। अभिव्यक्ति के सारे खतरे इस व्यंग्यकार ने उठाये हैं। परसाई के व्यंग्य का लक्ष्य परिवर्तन हैं। सामाजिक अनुपात बिगडा हुआ हैं, हर क्षेत्र में स्वार्थ भ्रष्टाचार, अन्याय, अत्याचार, जातीयता, साम्प्रदायिकता, अशिक्षा, अज्ञान, कुसंस्कार के कारण हर तरफ का आक्रोश हैं, तनाव हैं, संत्रास हैं, हिंसा है, संभ्रम है। आज समाज का इतना बूरा हाल हैं, मंदीर-मसजीद, स्कूल-कॉलेज, गुरू-शिष्य, सरकार-प्रजा, मुल्ला-पंडित कोई भी भ्रष्टाचार, बेईमानी से बचा नही हैं। आज भी स्वतंत्र भारत में नारीयों पर आत्याचार ज्यों क्यों त्यो हो रहे हैं। जिसके कारण संपूर्ण मानव समाज संघर्ष, रक्तपात, सत्ता, साम्राज्य जैसी विभ्रांतियों में भटक रहा हैं। इसीकारण विसंगति उभारने, उसे व्यंग्य के सहारे मानव समाज में घृणास्पद बनाना और सामाजिक अनुपात ठीक करने का परसाई जी के व्यंग्य का उद्देश्य हैं। अपने उद्देश्य की पूर्ति में परसाई केवल अखबारी सीधेपण का इस्तेमाल न करके "फैन्टसी" का सहारा लेते हैं। इस दृष्टि से देखा जाए तो परसाई आधुनिक हिन्दी साहित्य के संपन्न व्यंग्य लेखक हैं, जिन्होने कुल शोषणहीन, स्वस्थ समाज व्यवस्था की माँग अपने व्यंग्य लेखन से की हैं। वैसे देखा जाय तो मानवतावाद की स्थापना करके, व्यक्ति के चरित्र की उन्नत्ति करना परसाई जी का अंतिम लक्ष्य रहा हैं, जिससे सत् प्रवृत्तियों के प्रति निष्ठा, श्रध्दा बढायें, उसे परस्पर सहकार्य, बंधुभाव, प्रेम, सेवा, त्याग, संयम, अहिंसा का महत्व प्रतिपादन हो। परसाई जी ने व्यंग्य की संजिवनी बूटी समाज को पिलायी हैं, जिससे उम्मीद हैं कि व्यक्ति अपनी हर एक बुराईयों को छोडकर स्वस्थ बने। इसप्रकार परसाई जी सच्चे और ईमानदार

साहित्यकार हैं, जिन्होंने समाज को विचारात्मक निबंध दिये हैं। परसाई जी ने कभी भी अपनी कलम को बेचा नहीं और समाज के प्रति महान लेखक की जो जिम्मेदारी हैं, उसे उन्होंने पहचाना और अपने जीवन में अपनाया तथा अपनी व्यंग्यात्मक कृतियों के माध्यम से समाज को सुधारने की या समाज की गंदगी को धोने की भरसक चेष्टा की हैं।